इकाई 9 कारक प्रकरण – पंचमी विभक्ति

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 पंचमी विभक्ति के सूत्र, अर्थ एवं पद–विश्लेषण

9.3 सारांश

9.4 शब्दावली

9.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

9.6 अभ्यास प्रश्न

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- कारक प्रकरण की पंचमी विभक्ति से परिचित हो सकेंगे।
- पंचमी विभक्ति का वाक्यात्मक प्रयोग कर सकेंगे।
- पंचमी विभक्ति विधायक सूत्रों की वृत्ति तथा व्याख्या से प्रयोग रूपों को जान सकेंगे।
- अपादान संज्ञा का लक्षण समझकर उसके प्रयोग में कौशल प्राप्त करेंगे।
- अपादान संज्ञा एवं पंचमी विभक्ति के विशेष नियम, अपवाद एवं वार्तिकों का भी ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे; तथा
- सूत्रों का अर्थ एवं व्याख्या को समझ पायेंगें।

9.1 प्रस्तावना

इस इकाई के पहले आप वैयाकरण–सिद्धान्कौमुदी के कारकप्रकरण में प्रथमा विभक्ति, द्वितीया विभक्ति, तृतीया विभक्ति, चतुर्थी विभक्ति के विशेष एवं सामान्य नियमों (सूत्रों) का अध्ययन कर चुके हैं साथ में कर्मसंज्ञा, करणसंज्ञा, सम्प्रदान संज्ञा करने वाले सामान्य एवं विशेष नियमों तथा वार्तिकों का अध्ययन भी आपने कर लिया है। इस इकाई में अपादान का लक्षण, अपादान संज्ञा करने वाले सामान्य एवं विशेष सूत्रों तथा वार्तिको का अध्ययन आप करेंगें। अपादान संज्ञक शब्दों से पंचमी विभक्ति होती है इसका भी अध्ययन आप इस इकाई में करेंगे। अपादान संज्ञा करने वाले सूत्रों की वार्तिकों की व्याख्या भी आप सूत्रों के साथ पढेंगे।

पंचमी विभक्ति करने वाले सूत्रों की व्याख्या आप इस इकाई में विशेष प्रयोगों सहित आगे पढेंगे।

9.2 पंचमी विभक्ति के सूत्र, अर्थ एवं पद–विश्लेषण

सूत्र – ध्रुवमपायेऽपादानम् 1/4/24

वृत्ति – अपायो विश्लेषः, तस्मिन्साध्ये ध्रुवमवधिभूतं कारकमपादानं स्यात्।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – यह अपादान संज्ञा करने वाला सूत्र है। ध्रुवम्, अपाये, अपादानम् यह तीन पदवाला यह सूत्र है। 'ध्रु' गतिस्थैर्ययोः' इस धातु से पचादित्वाद् अच्प्रत्यय तथा कुटादित्वात् ङित्त्व होने के कारण अवङादेश करके 'ध्रुवम्' शब्द बनता है। अपायशब्द का अर्थ है विश्लेष। ध्रुव शब्द का अर्थ है अवधिभूत। दो संयुक्त अर्थो में एक के चलने से विश्लेष होता है। उन दोनों में जो चलन का आश्रय नहीं है वह ध्रुव कहलाता है तथा उसकी अपादान संज्ञा होती है। इस प्रकार 'प्रकृतधात्वर्थानाश्रयत्वे सति तज्जन्यविभागाश्रयों ध्रुवम्' यह ध्रुव का (अवधि का) लक्षण होता है। अर्थात् जो वाक्योपात्त धात्वर्थ व्यापार का अनाश्रय होते हुए धात्वर्थजन्यविभाग का आश्रय हो उसे ध्रुव कहते हैं। इस प्रकार दो संयुक्त अर्थो में एक के चलने से जो विश्लेष है उनमें जो चलन का अनाश्रय अवधिभूत है उसकी अपादानसंज्ञा होती है। इस प्रकार यह सूत्रार्थ निष्पन्न होता है।

उदाहरण – वृक्षात् पर्णं पतति। (वृक्ष से पत्ता गिरता है) यहाँ पर वृक्ष और पत्ता संयुक्त है। और पत्ते (पर्ण) में चलन है। इस चलन का आश्रय पर्ण (पत्ता) है और अनाश्रय वृक्ष है। इसलिये प्रकृत सूत्र से वृक्ष की अपादान संज्ञा होती है।

सूत्र – अपादाने पंचमी 1/4/24

वृत्ति – ग्रामादायाति। धावतोऽश्वात्पतति। कारकं किम्–वृक्षस्य पर्णं पतति।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – अपादान अर्थ में पंचमी विभक्ति का विधान करने वाला यह विधि सूत्र है। अपादाने यह पंचम्यन्त पद है, तथा पंचमी यह प्रथमान्त पद है। दो पद वाला यह सूत्र है। अपादान अर्थ में विद्यमान प्रातिपदिक से पंचमी विभक्ति होती है। यह सूत्र का अर्थ है।

उदाहरण – ग्रामादायति – कस्मादागच्छति (कहाँ से आते हो), इस आकांक्षा विषय के होने से ग्राम अवधि है तथा इस ग्राम की 'ध्रुवमपायेऽपादानम्' इस सूत्र से अपादान संज्ञा होती है। 'अपादाने पंचमी' इस प्रकृत सूत्र से ग्राम से पंचमी विभक्ति होती है।

धावतोऽश्वात्पतति – पूर्व में अचल ध्रुव का उदाहरण देकर श्रीमद्भट्टोजिदीक्षित जी यह चल ध्रुव का उदाहरण देते हैं। अपाय में जो उदासीन (पतन क्रिया का अनाश्रय) वह चाहे चल हो या अचल हो उसकी अपादान संज्ञा होती है। इसी बात को भर्तृहरि ने लिखा है – 'अपाये यदुदासीनं चलं वा यदि वाऽचलम्' इत्यादि। 'कस्मात्पतति' इस आकांक्षा का विषय होने से

पतन क्रिया का अनाश्रय होने के कारण चल अश्व की भी अपादान संज्ञा होती हैं और उससे 'अपादाने पंचमी' इस सूत्र से पंचमी विभक्ति होती है।

अब यहाँ यह शंका होती है कि अपादान संज्ञा विधायक सूत्र में कारकग्रहण क्यों किया गया। अर्थात् अवधिभूत कारक की अपादान संज्ञा होती है। ऐसा क्यों कहा गया। इसका उत्तर है कि 'वृक्षस्य पर्णं पतति' यहाँ वृक्ष की अपादान संज्ञा न हो इसलिये यहाँ कारक ग्रहण किया गया है। यहाँ वृक्ष की सम्बन्धित्वेन विवक्षा होने के कारण कारक नहीं है। इसलिए कारक ग्रहण के कारण इसकी अपादान संज्ञा नहीं होती है।

वार्तिक – जुगुप्साविरामप्रमादार्थानामुपसंख्यानम् (वा. 1079)

वृत्ति – पापाज्जुगुप्सते, विरमति। धर्मात् प्रमाद्यति।

वार्तिकानुवाद एवं व्याख्या – इस वार्तिक के द्वारा अपादान संज्ञा की जाती है। 'जुगुप्साविरामप्रमादार्थानाम्' यह षष्ठी विभक्ति का बहुवचन है। 'उपसंख्यानम्' यह प्रथमान्त पद है। इस सूत्र में दो पद है। अपादन संज्ञा कहनी चाहिए, यह 'उपसंख्यानम्' का अर्थ है। जुगुप्सा=विरति (रूकना), प्रमाद=अनवधानता (ध्यानाभाव) इन अर्थों वाले धातु के कारक की अपादान संज्ञा होती है। यह वार्तिक का अर्थ है। संयोगपूर्वक विश्लेष को विभाग कहते हैं, वह यहाँ नहीं है। इसलिए सूत्र से अपादान संज्ञा प्राप्त नहीं है। इसलिये वार्तिक का आरम्भ किया गया है। भाष्याकार ने बुद्धिपरिकल्पि अपाय को मानकर इस वार्तिक का प्रत्याख्यान कर दिया है।

उदाहरण – पापाज्जुगुप्सते। (पाप से घृणा करता है) पापाद् विरमति। (पाप से रुकता है)। धर्मात् प्रमाद्यति। (धर्म से प्रमाद करता है।) ये तीनों उदाहरण हैं। इन उदाहरणों में प्रकृत वार्तिक से पाप और धर्म की अपादान संज्ञा होती है और 'अपादाने पंचमी' इस सूत्र से पंचमी विभक्ति होती है।

सूत्र – भीत्रार्थानां भयहेतुः 1/4/25

वृत्ति – भयार्थानां त्राणार्थानां च प्रयोगे भयहेतुरपादानं स्यात्। चोराद्बिभेति। चोरात्त्रायते। भयहेतुः किम्? अरण्ये विभेति, त्रायते वा।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – 'ध्रुवमपायेऽपादानम्' इस सूत्र से 'अपादानम्' इस पद की अनुवृत्तिहै। यह अपादान संज्ञा करने वाला सूत्र है। 'भीत्रार्थानां' यह षष्ठ्यन्त पद है। 'भयहेतुः' यह प्रथमान्त पद है। भय के कारण को भयहेतु कहते हैं। चोर से डरता है, यहाँ पर भय का कारण चोर है। इस प्रकार भयार्थक और त्राणार्थक=रक्षणार्थक का प्रयोग होने पर भयहेतु (भय के कारण) की अपादान संज्ञा होती है। यह सूत्रार्थ निष्पन्न होता है। भाष्यकार ने बुद्धिपरिकल्पित अपाय को मानकर इस सूत्र का प्रत्याख्यान कर दिया है।

उदाहरण – चोराद्बिभेति – (चोर से डरता है)। चोरात्त्रायते (चोर से रक्षा करता है)। यहाँ पर भयहेतु चोर है। इसलिये प्रकृतसूत्र से चोर की अपादान संज्ञा होती है तथा अपादाने पंचमी से पंचमीविभक्ति होकर उक्त उदाहरण की सिद्धि होती है।

अब यहाँ यह शंका होती है कि इस सूत्र में भयहेतुः यह पद क्यों रखा है। इसका उत्तर देते हुये दीक्षित जी लिखते हैं कि अरण्ये विभेति, त्रायते वा। (जंगल में डरता है या रक्षा करता है) इस उदाहरण में अरण्यः (जंगल) भयहेतु नहीं है। इसकी अपादान संज्ञा प्रकृत सूत्र से न हो जाए, इसलिये इस सूत्र में 'भयहेतु' यह पद रखा है।

सूत्र – पराजेरसोढः 1/4/26

वृत्ति– पराजेः प्रयोगेऽसह्योऽर्थोऽपादानं स्यात्।

अध्ययनात्पराजयते। ग्लायतीत्यर्थः। असोढः किम्? शत्रून् पराजयते। अभिभवतीत्यर्थः।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्यान – यह अपादान संज्ञा करने वाला सूत्र है। 'ध्रुवमपायेऽपादानम्' इस सूत्र से 'अपादानम्' इस पद की अनुवृत्तिहोती है। 'पराजेः' यह परा उपसर्गपूर्वक जि धातु के षष्ठी एकवचन का रूप है। 'असोढः' यह प्रथमान्त पद है। यह धातु से क्त प्रत्यय करने पर 'सह्+त' इस स्थिति में 'धत्वढत्वष्टुत्वढलोप' करने के बाद 'सहिवहोरोदवर्णस्य' इस सूत्र से ओकार करने पर 'सोढ' यह कृदन्तशब्द निष्पन्न होता है। क्तप्रत्ययार्थ भूतकाल यहाँ विवक्षित नहीं है। इस प्रकार सोढ का सह्य अर्थ है। न सोढः असोढः का असह्य यह अर्थ है। इस प्रकार परा उपसर्ग पूर्वक जि धातु का प्रयोग होने पर असह्य अर्थ की अपादान संज्ञा होती है। यह सूत्र का अर्थ होता है। जब असह्य से निवृत्त होता है, यह अर्थ विवक्षित होगा तो 'ध्रुवमपायेऽपादानम्' इस सूत्र से ही अपादान संज्ञा सिद्ध है। हेतुतृतीया का अपवाद यह सूत्र है।

उदाहरण – अध्ययनात्पराजयते। यद्यपि जि धातु परस्मैपदी है फिर भी 'विपराभ्यां जेः' इस सूत्र से आत्मनेपद होता हैं इस पराजयते में आत्मनेपद होता है। इस उदाहरण में परा उपसर्ग पूर्वक जि धातु का प्रयोग होता है तथा असह्य अर्थ अध्ययन है। इसलिये अध्ययन की प्रकृ त सूत्र से अपादान संज्ञा होती है तथा अपादाने पंचमी से पंचमी विभक्ति होती है।

अब यहाँ यह शंका होती है कि इस सूत्र असोढ=असह्य पद की क्या आवश्यकता है। तो इसका उत्त्र देते हुये दीक्षित जी कहते है कि शत्रून् पराजयते (शत्रुओं को पराजित करता है) यहाँ पर 'शत्रु' असह्य नहीं है परन्तु सह्य है तभी तो पराजित करता है। यहाँ शत्रु की अपादन संज्ञा न हो जाय इसलिये 'असोढः' यह पद इस सूत्र में रखा गया है।

सूत्र – वारणार्थानामीप्सितः 1/4/26

वृत्ति– प्रवृत्तिविघातो वारणम्। वारणार्थानां धातूनां प्रयोगे ईप्सितोऽर्थोऽपादानं स्यात्। यवेभ्यो गां वारयति। ईप्सितः किम्–यवेभ्यो गां वारयति क्षेत्रे।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – यह अपादान संज्ञा विधायक सूत्र है। वारणार्थानाम्, ईप्सितः यह पदच्छेद है। दो पदवाला यह सूत्र है। पूर्वसूत्र से 'अपादानम्' इस पद की अनुवृत्तिहोती है। प्रवृत्तिके विघात (रोकने) को वारण कहते हैं। इस प्रकार वारणार्थक धातु के प्रयोग होने पर जो ईप्सित अर्थ उसकी अपादान संज्ञा होती है। यह सूत्रार्थ होता है। संयोगपूर्वक विश्लेष नहीं होने के कारण पूर्वसूत्र से अपादानसंज्ञा अप्राप्त है। इसलिए इस सूत्र का आरम्भ किया गया है।

उदाहरण – यवेभ्यो गां वारयति। (यवों में प्रवृत्तिकी इच्छावाली गौ को प्रवृत्तिसे विमुख करता है)। इस उदाहरण में यवों के संरक्षणीय होने से 'यव' ईप्सित है। इसलिये इसकी प्रकृतसूत्र से अपादानसंज्ञा होकर पंचमी विभक्ति के बहुवचन में 'यवेभ्यः' इस रूप की सिद्धि होती है, तथा गौ के परकीय (दूसरे का) होने से अनीप्सित (उदासीन) होने के कारण गौ की 'तथायुक्तं चानीप्सितम्' इस सूत्र से कर्मसंज्ञा तथा उससे द्वितीया विभक्ति होने से 'गाम्' इस रूप की सिद्धि होती है।

जब यव (परकीय) दूसरे का है, गौ अपना है तब भी वारण सम्भव है। क्योंकि यवों के विनाश से अधर्म होगा, तथा यवस्वामी गौ को बाध लेगा एवं यवस्वामी गोस्वामी को दण्डित करेगा। इस हेतु से 'यव' ईप्सित है, उसकी प्रकृत सूत्र से अपादान संज्ञा होती है, तथा गौ के ईप्सिततम होने से 'कर्तुरीरिसिततमं कर्म' इस सूत्र से गौ की कर्म संज्ञा होती है, तथा द्वितीया विभक्ति होती है।

अब यहाँ यह शंका होती है कि इस सूत्र में ईप्सित पद क्यों रखा गया है। इसका उत्तर देते हुये दीक्षित जी लिखते हैं कि 'यवेभ्यो गां वारयति क्षेत्रे' इस उदाहरण में क्षेत्र के ईप्सित नहीं होने से क्षेत्र की अपादानसंज्ञा नहीं होती है। यदि इस सूत्र में 'ईप्सित' यह पद नहीं होता तो क्षेत्र की अपादान संज्ञा हो जाती। वह न हो इसलिये इस सूत्र में ईप्सित पद रखा गया है।

सूत्र – अन्तर्धौ येनादर्शनमिच्छति 1/4/28

वृत्ति – व्यवधाने सति यत्कर्तृकस्यात्मनो दर्शनस्याभावमिच्छति तदपादानं स्यात्। मातुर्निलीयते कृष्णः। अन्तर्धौ किम्? चौरान् न दिदृक्षते। इच्छतिग्रहणं किम्–अदर्शनेच्छायां सत्यां सत्यपि दर्शने यथा स्यात्। (देवदत्तात् यज्ञदत्तो निलीयते)।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – इस सूत्र के द्वारा अपादानसंज्ञा की जाती है। अन्तर्धौ, येन, अदर्शनम्, इच्छति यह पदच्छेद है। अन्तर्धौ का अर्थ है, व्यवधान होने पर। 'येन' इसमें कर्ता में तृतीया विभक्ति है। 'न दर्शनम् अदर्शनम्' इसमें नञ्तत्पुरूष समास है। दर्शन का अभावः यह अर्थ है। 'येन' इस कर्तृतृतीया के अनुरोध से 'आत्मनः' इस कर्मषष्ठ्यन्त पद का अध्याहार किया जाता है; नहीं तो येन में 'कर्तृकर्मणोःकृति' इस सूत्र से षष्ठी विभक्ति हो जाती। 'आत्मनः' इस कर्मषष्ठ्यन्त पद में 'उभयप्राप्तौ कर्मणि' से कर्म में ही षष्ठी है। इस प्रकार 'येन' में कर्तृतृतीया निर्बाध है। इस प्रकार व्यवधान होने पर जो कोई जिस कर्ता से अपने को नहीं दिखाना (दर्शनाभाव को) चाहता है उसकी अपादान संज्ञा होती है। यह सूत्रार्थ होता है।

कर्तृतृतीया का यह सूत्र अपवाद है। भाष्यकार ने बुद्धिकृत अपादानत्व को मानकर इस सूत्र का भी प्रत्यारव्यान कर दिया है।

उदाहरण – मातुर्निलीयते कृष्णः। (कृष्ण माता से अपने को छिपाते है) इस उदाहरण में माता दर्शन की कर्त्री है, अर्थात् माता कृष्ण को देखना चाहती है। लेकिन कृष्ण किवाड़ (दरवाजे) के पीछे अपने को छिपाते हैं। इस प्रकार मातृकर्तृक दर्शनाभाव को कृष्ण चाहते हैं। इसलिए 'मातृ' की प्रकृत सूत्र से अपादान संज्ञा होती है तथा 'अपादाने पंचमी' से पंचमी विभक्ति होती है। भाष्य में बुद्धिकृत–अपादान को मानकर सूत्र का प्रत्याख्यान किया गया है।

अब यहाँ यह शंका होती है कि इस सूत्र में 'अन्तर्धौ' इस पद की क्या आवश्यकता है। इसका उत्तर देते हुए दीक्षित जी कहते हैं कि 'चौरान् न दिदृक्षते' (चोरों को नहीं देखना नहीं चाहता है) चोर सामने आ गया तो डर से आँखे बन्द करता है, यह उदाहरण का तात्पर्य है। यहाँ अन्तर्धि (व्यवधान) नहीं होने के कारण 'चौर' की अपादान संज्ञा नहीं होती है। इसीलिए सूत्र में अन्तर्धिग्रहण किया गया है।

अब दूसरी शंका होती है कि इस सूत्र में 'इच्छति' ग्रहण क्यों किया गया है। तो इसका उत्तर दीक्षित जी देते है कि अदर्शन की इच्छा रहने पर यदि दर्शन हो गया तो भी अपादान संज्ञा हो जाय इसलिए सूत्र में इच्छति ग्रहण किया गया है। जैसे देवदत्तात् यज्ञदत्तो निलीयते (देवदत्त से यज्ञदत्त छिपता है)। इस उदाहरण में यद्यपि यज्ञदत्त किसी के व्यवधान में छिपा है तथा चाहता है कि देवदत्त मुझे न देखे। लेकिन देवदत्त यज्ञदत्त को देख लेता है। फिर भी देवदत्त की अपादान संज्ञा होती है, इच्छतिग्रहण के कारण।

सूत्र – आख्यातोपयोगे 1/4/29

वृत्ति – नियमपूर्वकविद्यास्वीकारे वक्ता प्राक्संज्ञः स्यात्। उपाध्यायादधीते। उपयोगे किम्–नटस्य गाथां शृणोति।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – इस सूत्र के द्वारा अपादानसंज्ञा की जाती है। आख्याता=वक्ता है। उपयोग का अर्थ है, नियमपूर्वक विद्यास्वीकरण। पूर्वसूत्र 'अपादानम्' इस पद की अनुवृत्तिहोती है। इस प्रकार नियमपूर्वक यदि विद्या को ग्रहण किया जाना अर्थ हो तो वक्ता की अपादानसंज्ञा होती है। यह सूत्रार्थ होता है।

उदाहरण – उपाध्यायादधीते। (उपाध्याय से अध्ययन करता है)। इस उदाहरण में नियमपूर्वक उपाध्याय के उच्चारण का अनुच्चारण करता है, यह तात्पर्य है। इसलिये उपाध्याय की अपादानसंज्ञा तथा पंचमी विभक्ति होती है। भाष्य में यह सूत्र प्रत्याख्यात है।

अब यहाँ शंका होती है कि इस सूत्र में 'उपयोगे' पद क्यों रखा है। तो जहाँ पर नियमपूर्वक विद्याग्रहण अर्थ न हो वहाँ अपादानसंज्ञा को रोकने के लिए सूत्र में उपयोगे पद को रखा गया है। जैसे– नटस्य गाथां शृणोति। यहाँ नट से नियम पूर्वक गाथा का ग्रहण नहीं करता है। अर्थात ताली बजाकर कोलाहल करके गाथा को सुनता है इसलिए नट की अपादानसंज्ञा नहीं हुयी।

सूत्र – जनिकर्तुः प्रकृतिः 1/4/30

वृत्ति – जायमानस्य हेतुरपादानं स्यात्। ब्रह्मणः प्रजाः प्रजायन्ते।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – जनि का अर्थ है उत्त्पत्तिः। जनेः कर्ता ऐसा विग्रह करके शेषषष्ठी होने के कारण षष्ठीतत्पुरूष समास होता है। प्रकृति शब्द का अर्थ है हेतु=कारण। पूर्वसूत्र से 'अपादानम्' इस पद की अनुवृत्तिहोती है। यह सूत्रार्थ है। इस सूत्र के द्वारा अपादान संज्ञा की जाती है।

उदाहरण – ब्रह्मणः प्रजाः प्रजायन्ते। (हिरण्यगर्भ से प्रजा उत्पन्न होती है)। इस उदाहरण में प्रजा का मूलकारण ब्रह्म है। इसलिए ब्रह्म की प्रकृत सूत्र से अपादानसंज्ञा, तथा पंचमी विभक्ति होती है।

सूत्र – भुवः प्रभवः 1/4/31

वृत्ति – भवनं भूः। भूकर्तुः प्रभवस्तथा। हिमवतो गङ्गा प्रभवति। तत्र प्रकाशत इत्यर्थः।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – इस सूत्र के द्वारा भी अपादानसंज्ञा की जाती है। पूर्वसूत्र में समासनिर्दिष्ट होने पर भी कर्तृपद में (एकदेश में) स्वरितत्वप्रतिज्ञा के बल से इस सूत्र में कर्तृपद की अनुवृत्तिहो जाती है। भवनम् ऐसा विग्रह करके संपदादित्वात् क्विप् प्रत्यय करके 'भूः' इस पद की सिद्धि होती है। 'भुवः कर्ता तस्य' ऐसा विग्रह करके 'भूकर्तुः' इस षष्ठ्यन्त पद की सिद्धि होती है। प्रभव का अर्थ है प्रथम प्रकाश स्थान। इस प्रकार भवन (होने) के कर्ता का प्रथम प्रकाश स्थान की अपादान संज्ञा होती है। यह सूत्रार्थ निष्पन्न होता है। भाष्य में अपक्रमण करता है (अप्रक्रामति) ऐसा अर्थ स्वीकार करके इस सूत्र की ध्रुवमपायेऽपादानम्' इसी से गतार्थता की है।

उदाहरण – हिमवतो गङ्गा प्रभवति। हिमालय से गङ्गा प्रकट होती है। यहाँ प्रभवति क्रिया का कर्ता गङ्गा है। और गङ्गारूप कर्ता का प्रथम प्रकाश स्थान (प्रभव) हिमवत् है। इसलिए इसकी प्रकृत सूत्र से अपादन संज्ञा तथा पंचमी विभक्ति होकर 'हिमवतः' इस पंचम्यन्त पद की सिद्धि होती है।

वार्तिक – ल्यब्लोपे कर्मण्यधिकरणे च (1474–1475)

वृत्ति– प्रासादात्प्रेक्षते, आसनात्प्रेक्षते। प्रसादमारूह्य, आसन उपविश्य प्रेक्षत इत्यर्थः। श्वशुराज्जिह्रेति। श्वशुरं वीक्ष्येत्यर्थः।

वार्तिकानुवाद एवं व्याख्या – इस वार्तिक के द्वारा पंचमी विभक्ति की जाती है। यहाँ ल्यब्ग्रहण–ल्यबर्थ का बोधक है। इससे क्त्वा का भी लोप होने पर पंचमी विभक्ति होगी। ल्यबन्त का लोप=अदर्शन=अप्रयोग होने पर ल्यबन्त के प्रति जो कर्म अथवा अधिकरण उससे पंचमी विभक्ति होती है। यह वार्तिक का अर्थ है।

उदाहरण – प्रासादात्प्रेक्षते – (महल को प्राप्त कर देखता है)। यहाँ 'आरुह्य' इस ल्यबन्त का अप्रयोग है, तथा इस ल्यबन्त का कर्म प्रासाद है, इससे पंचमी विभक्ति होती है।

आसनात्प्रेक्षते – (आसन में बैठकर देखता है)। इस उदाहरण में 'उपविश्य' इस ल्यबन्त का अप्रयोग है। तथा इसका अधिकरण=आधार आसन है। इससे पंचमी विभक्ति होती है।

श्वशुराज्जिह्रेति – (श्वशुर को देखकर लज्जा करती है) इस उदाहरण में वीक्ष्य (देखकर) इस ल्यबन्त का अप्रयोग है। तथा इसका कर्म श्वशुर है। इसलिए श्वशुर पद से पंचमी विभक्ति होती है।

कर्म एवम् अधिकरण अर्थ को बताने के लिए मूल में लिखते हैं कि 'प्रसादमारुह्य, आसन अपविश्य प्रेक्षते इत्यर्थः। श्वशुरं वीक्ष्येत्यर्थः; उक्त उदाहरण में आरुह्य, उपविश्य, वीक्ष्य इस ल्यबन्त का अप्रयोग है यह प्रतीत होता है।

वार्तिक – गम्यमानापि क्रिया कारकविभक्तीनां निमित्तम् (5041)

वृत्ति – कस्मात्त्वम्, नद्याः।

वार्तिकानुवाद एवं व्याख्या – पूर्व वार्तिक में ल्यबन्त के कर्म एवम् अधिकरण से पंचमी विभक्ति का विधान किया गया। तो प्रश्न हुआ कि जब ल्यबन्त का अप्रयोग है तो ल्यबन्तार्थ के प्रति कर्म और अधिकरण की अवगति कैसे होगी। तो इसका उत्तर देने के लिये ही 'गम्यमानापि. ..' इस वार्तिक को बनाया गया है। इस वार्तिक का अर्थ है– गम्यमान=प्रतीयमान=प्रतीत होने वाली क्रिया भी कारक विभक्ति का निमित्त (कारण) होती है। अर्थात वाक्य में यदि प्रयोग न हो तो भी, किसी प्रकार प्रतीत होने पर भी जो क्रिया वह कारकविभक्ति को बनाने में कारण होती है।

उदाहरण – 'कस्मात्त्वम्' नद्याः। (किससे तुम) नदी से। इस उदाहरण में 'आगतः' (आये हो) यह क्रिया पद प्रतीयमान है। 'आगतः' इस प्रतीयमान क्रिया के कारण 'कस्मात्' एवम् 'नद्याः' इन दोनो पदों में कारक विभक्ति=पंचमी विभक्ति हुयी है।

वार्तिक – यतश्चाध्वकालनिमनं ततः पंचमी (वा. 1477);

तद्युक्तादध्वनः प्रथमासप्तम्यौ (वा. 1479);

कालात्सप्तमी वक्तव्या (वा 1478)

वृत्ति – वनाद् ग्रामो योजनं योजने वा। कार्तिक्या आग्रहायणी मासे।

वार्तिकानुवाद एवं व्याख्या – प्रथम वार्तिक के द्वारा पंचमी विभक्ति का विधान किया जाता है। 'यतः' में 'येन' ऐसा विग्रह करके तृतीयान्त से तसि प्रत्यय किया गया है। अध्वा=मार्ग। काल=समय। इस प्रकार जिस अवधि के द्वारा मार्ग एवम् समय का निमान=परिच्छेद=परिमाण–इयत्ता की प्रतीति हो, उससे पंचमी विभक्ति होती है। यह वार्तिक का अर्थ होता है।

द्वितीय वार्तिक में तत्पद से पंचम्यन्त का ग्रहण होता है। इस प्रकार पंचम्यन्त से युक्त अध्ववाची प्रातिपदिक से प्रथमा और सप्तमीविभक्ति होती है। यह द्वितीय वार्तिक का अर्थ है। तृतीय वार्तिक का अर्थ है कि पंचम्यन्त से युक्त जो कालवाची प्रातिपदिक है उससे सप्तमीविभक्ति होती है।

उदाहरण – वनाद् ग्रामों योजनं योजने वा। वन से गाँव एक योजन पर है (एक कोस है)। इस उदाहरण में वन से ग्राम की दूरी बतायी जा रही है इसलिए अवधिभूत वन से पंचमी विभक्ति प्रथम वार्तिक द्वारा की गयी है; तथा अध्ववाची योजन शब्द से द्वितीय वार्तिक द्वारा प्रथमा एवम् सप्तमी विभक्ति की गयी है।

कार्तिक्याः आग्रहायणीमासे। (कार्तिक से अगहन एक मास है)। इस उदाहरण में प्रथम वार्तिक से 'कार्तिकी' शब्द से पंचमीविभक्ति हुयी है; तथा तृतीय वार्तिक से कालवाची मासशब्द से सप्तमी विभक्ति हुयी है।

सूत्र – अन्यारादितरर्तेदिक्शब्दाञ्चूत्तरपदाजाहियुक्ते। 2/3/29

वृत्ति – एतैर्योगे पंचमी स्यात्। अन्येत्यर्थग्रहणम्। इतरग्रहणं प्रपंचार्थम्। अन्यो भिन्न इतरो वा कृष्णात्। आराद्वनात्। ऋते कृष्णात्। पूर्वो ग्रामात्। दिशि दृष्टः शब्दो दिक्शब्दः। तेन संप्रति देशकालवृत्तिना योगेऽपि भवति। चैत्रात्पूर्वः फाल्गुनः। अवयववाचियोगे तु न। 'तस्य परमाम्रेडितम्' इति निर्देशात्। पूर्वं कायस्य। अंचूत्तरपदस्य तु दिक्शब्दत्वेऽपि 'षष्ठ्यतसर्थप्रत्ययेन' इति षष्ठीं बाधितुं पृथग्ग्रहणम्। प्राक्, प्रत्यग् वा ग्रामात्। आच्–दक्षिणा ग्रामात्। आहि–दक्षिणाहि ग्रामात्। 'अपादाने पंचमी' इति सूत्रे 'कार्तिक्याः प्रभृति' इति भाष्य प्रयोगात्प्रभृत्यर्थयोगे पंचमी। भवात् प्रभृति आरभ्य वा सेव्यो हरिः। 'अपपरिबहिः...–' इति समासविधानात् ज्ञापकाद् बहिर्योगे पंचमी। ग्रामाद्बहिः।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – पंचमी विभक्ति का विधान करने वाला यह विधिसूत्र है। समस्त एक पद वाला यह सूत्र है। (1) अन्य का भिन्न अर्थ है। (2) आरात् का दूर और समीप अर्थ है। (3) इतर का भिन्न अर्थ है। (4) ऋते का बिना अर्थ है। (5) दिक् शब्द=दिशा अर्थ में देखा गया पूर्व, उत्तर आदि शब्द अर्थ है। (6) अंचूत्तरपद=अंचु धातु उत्तर पद के रूप में जिस शब्द में हो वे शब्द लिए जाते हैं। जैसे प्राक्, प्रत्यक् आदि। (7) आच्, यह प्रत्यय है। आच्प्रत्ययान्त शब्द के योग में है। (8) आदि, यह भी प्रत्यय है। आहिप्रत्ययान्तशब्द के योग में है।

उपर्युक्त आठों के योग में पंचमी विभक्ति होती है। यह सूत्र का अर्थ है। अन्य के द्वारा अन्यार्थकशब्द का ग्रहण होता है। अन्य का अर्थ भी भिन्न है, इतर भी अन्यार्थक है। इसलिए अन्य से इतर का ग्रहण सिद्ध है। इतर ग्रहण प्रपंचार्थ है। इसलिये अन्य भिन्न इतर आदि अन्यार्थक शब्दों के योग में पंचमी विभक्ति जाननी चाहिए।

उदाहरण –

1) अन्यार्थक – अन्यो भिन्न इतरो वा कृष्णात्। कृष्ण प्रतियोगी है जिसका अर्थ भेद वाला है। यह इसका अर्थ है। अर्थात कृष्ण से भिन्न है।

2) इतर का भी उदाहरण यहाँ आ गया।

3) आराद्वनात्। (वन के समीप अथवा दूर) 'आरात्।' अव्यय के योग में वन से प्रकृत सूत्र से पंचमी विभक्ति हुयी।

4) ऋते कृष्णात्। (कृष्ण के बिना) ऋते के योग में कृष्ण से पंचमी विभक्ति।

5) दिक्शब्द। पूर्वो ग्रामात्। ग्राम के पूर्व। दिशावाचीपूर्व शब्द के योग में ग्राम शब्द से पंचमी विभक्ति। यहाँ पर दिक्शब्द से दिशा अर्थ में देखा गया जो शब्द ('दिशि दृष्टः' इस विग्रह के कारण) उस शब्द का ग्रहण किया जाता है। पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण आदि शब्द का ग्रहण किया गया है। यह भाव है कि पूर्वादिशब्द इस समय दिशा अर्थ में न हो देश, काल, वाची भी हों तो भी पूर्वादिशब्दों के योग में यह सूत्र पंचमी विभक्ति करता है। जैसे– चैत्रात्पूर्वः फाल्गुनः। चैत्र के पूर्वकाल में फाल्गुन मास है। यहाँ पूर्व शब्द दिशा वाची नहीं है। किन्तु कालवाची है। फिर भी चैत्रवाद से पंचमी विभक्ति होती है। यही दिशि दृष्टः दिक्शब्दः का तात्पर्य है।

   अवयववाची यदि पूर्वादिशब्द हो तो उसके योग में पंचमी विभक्ति नहीं होती है। किन्तु षष्ठी विभक्ति ही होती है। 'तस्य परमाम्रेडितम्' यही सूत्र इसमें प्रमाण है। यहाँ पर (अवयववाची) के योग में 'तस्य' यह षष्ठी विभक्ति देखे जाने से पता चलता है। इसलिए 'पूर्वं कायस्य' (काय=शरीर का पूर्व अवयव) यहाँ पर पूर्व अवयववाची के योग में काय से पंचमी विभक्ति नहीं हुयी। किन्तु षष्ठी विभक्ति ही हुयी है।

6) अंचूत्तर पद–1 : प्राक्, प्रत्यक् आदि शब्द है। यह प्राक्, प्रत्यक् आदि शब्द भी यद्यपि दिक्शब्द है। दिक्शब्दत्वेन ही इनके योग में भी पंचमी विभक्ति हो सकती थी फिर भी 'षष्ठ्यतसर्थ...' इस सूत्र से प्राक् प्रत्यक् आदि शब्दों के योग में षष्ठी विभक्ति प्राप्त होती है। उसको बाधने के लिए इस सूत्र में अंचूत्तर पद का ग्रहण किया गया है। प्राक् प्रत्यग् वा ग्रामात्। यहाँ पर 'अंचेर्लुक' इस सूत्र से प्राक् और प्रत्यक शब्द से पर में अतसर्थक अस्ताति–प्रत्यय का लुक हुआ है। इसलिए 'षष्ठ्यतसर्थ...' इस सूत्र से प्राप्त षष्ठी को बाँधकर इस सूत्र से ग्राम शब्द से पंचमी विभक्ति हुयी है।

7) आच्। दक्षिणा ग्रामात्। (ग्राम के दक्षिण दिशा में) यहाँ दक्षिणाशब्द आच्प्रत्ययान्त है। इसके याग में ग्राम से पंचमी विभक्ति हुयी है।

8) आहि। दक्षिणाहि ग्रामात्। (ग्राम के दक्षिण दिशा में)। यहाँ दक्षिणाहि शब्द आदि प्रत्ययान्त है। इसके योग में ग्राम से पंचमी विभक्ति इस सूत्र द्वारा की गयी है। दक्षिणा, दक्षिणाहि, अर्थात, आजाहिप्रत्ययान्त शब्द भी दिशा वाची है। इसलिए दिक्शब्दत्वेन ही इसके योग में भी पंचमी विभक्ति हो जाती। इसलिए सूत्र में इन दोनों का भी प्रयोजन चिन्त्य है।

प्रभृति के योग में पंचमी विभक्ति होती है। इसमें प्रमाण है। 'अपादाने पंचमी' इस सूत्र में 'कार्तिक्याः प्रभृति' यह भाष्य प्रयोग। यहाँ प्रभृतिशब्द के योग में भाष्यकार ने कार्तिकी शब्द से (कार्तिक्याः) पंचमी विभक्ति का जो विधान किया है उसी से पता चलता है कि प्रभृत्यर्थ के योग में पंचमी विभक्ति होती है। इसलिए भवात् प्रभृति आरभ्य वा सेव्यो हरिः। इस उदाहरण में प्रभृति के योग में भव से पंचमी विभक्ति होती है।

बहिशब्द के योग में भी पंचमी विभक्ति होती है। इसमें प्रमाण है। भगवान पाणिनि का 'अपपरिबहि...' इस सूत्र के द्वारा पंचम्यन्त के साथ बहिशब्द का समासविधान करना ही प्रमाण है। (ज्ञापन है)। ग्रामाद्बहिः ग्राम के बाहर। यहाँ बहिशब्द के योग में ग्रामशब्द से पंचमी विभक्ति 'अपरिबहि...' इत्यादि सूत्र के ज्ञापन से होती है।

सूत्र – अपपरी वर्जने 1/4/88

वृत्ति– एतौवर्जने कर्मप्रवचनीयौ स्तः।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – कर्मप्रवचनीय संज्ञा का विधान करने वाला यह सूत्र है। कर्मप्रवचनीयाः' इस अधिकार सूत्र की अनुवृत्ति होती है; तथा प्रथमा द्विवचन में विपरिणाम (बदल) जाता है। 'अपपरी' यह भी प्रथमा का द्विवचन है। इसी कारण से कर्मप्रवचनीय द्विवचन में बदलता है। दो पदवाला यह सूत्र है। वर्जन का अर्थ है छोड़ना। इस प्रकार वर्जन अर्थवाले अप, परि की कर्मप्रवचनीय संज्ञा होती है। यह सूत्रार्थ होता है।

उदाहरण – अप हरेः परि हरेः संसारः (हरि को छोड़कर संसार है)। यहाँ पर अप और परि वर्जनार्थक है। इसलिए अप, परि की 'अपपरी वर्जने' इस सूत्र से कर्मप्रवचनीय संज्ञा होती है। कर्मप्रवचनीय संज्ञा का प्रयोजन 'हरेः' में पंचमी विभक्ति का विधान पंचम्यपाङपरिभिः इस अग्रिम सूत्र से होना है। इस सूत्र में वर्जने देने के कारक परिषिञ्चति इस प्रयोग में परि की ('वर्जनार्थक नहीं होने के कारण) कर्मप्रवचनीय संज्ञा नहीं हुयी तथा उपसर्ग संज्ञा ही परि की रहती है। इस कारण 'उपसर्गात्सुनोति...' इत्यादि सूत्र से षत्व होता है।

सूत्र – आङ्मर्यादावचने 1/4/89

वृत्ति– आङ्मर्यादायामुक्तसंज्ञः स्यात्। वचनग्रहणादभिविधावपि।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – इस सूत्र के द्वारा भी कर्मप्रवचनीयसंज्ञा की जाती है। यहाँ पर भी 'कर्मप्रवचनीयाः' इस सूत्र का अधिकार है। 'मर्यादायाम्' ऐसा ही सूत्र कर सकते थे। वचनग्रहण क्यों किया। इसका उत्तर मूल में ही दीक्षित जी दिया कि 'वचन' ग्रहण के कारण 'अभिविधि' अर्थ भी लिया जाता है। इसमें हेतु यह है कि 'मर्यादा उच्यते यत्र=यस्मिन् सूत्रे' अर्थात् मर्यादा जिस सूत्र में कहा गया है वह सूत्र मर्यादावचन से लिया जाता है। इस प्रकार 'मर्यादावचन' से 'आङ्मर्यादाभिविध्योः' यह सूत्र विवक्षित है। इस सूत्र में दोनों पद है। तेन बिना मर्यादा। तेन सहेत्यभिविधिः। निर्दिश्यमान अवधि को छोड़कर मर्यादा होती है; तथा निर्दिश्यमान को

लेकर अभिविधि होती है। इस प्रकार मर्यादा एवम् अभिविधि अर्थ में आङ् की कर्मप्रवचनीयसंज्ञा होती है। यह सूत्रार्थ होता है।

उदाहरण –

आ मुक्तेः संसारः (मुक्ति के पहले तक संसार है)। इस उदाहरण में निर्दिश्यमान अवधि मुक्ति है। उसको छोड़कर संसार है। इसलिए यहाँ मर्यादा अर्थ में आङ् की कर्मप्रवचनीय संज्ञा होती है तथा 'पंचम्यपाङ्परिभिः' इस अग्रिम सूत्र से आङ् का योग होने के कारण 'मुक्ति' से पंचमी विभक्ति होती है।

अभिविधि – आ सकलाद् ब्रह्म। (सकल=सम्पूर्ण के सहित ब्रह्म है) यहाँ निर्दिश्यमान सकल को लेकर यह अर्थ है। इसलिए अभिविधि अर्थ है। और आङ् अभिविधि अर्थ में कर्मप्रवचनीय संज्ञक है। तथा इसके योग में अग्रिम 'पंचम्यपाङ्परिभिः' इस सूत्र से सकल शब्द से पंचमी विभक्ति हुयी है।

सूत्र – पंचम्यपाङ्परिभिः 2/3/10

वृत्ति– एतैः कर्मप्रवचनीयैर्योगे पंचमी स्यात्। अपहरेः, परि हरेः संसारः। परिरत्र वर्जने। लक्षणादौ तु हरिं परि। आ मुक्तेः संसारः। आ सकलाद् ब्रह्म।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – इस सूत्र के द्वारा पंचमी विभक्ति होती है। यह विधिसूत्र है। 'पंचमी' यह प्रथमान्त पद है। तथा 'अपाङ्परिभिः' यह तृतीयान्त पद है। इस प्रकार अप, आङ्, परि इन तीनों कर्मप्रवचनीय संज्ञक के योग में पंचमी विभक्ति होती है। यह सूत्रार्थ है।

उदाहरण : अप–अप हरेः संसारः। 'अपपरी वर्जने' से अप की कर्मप्रवचनीयसंज्ञा तथा प्रकृत सूत्र से हरि में पंचमी विभक्ति की गयी है।

परि– परि हरेः संसारः। परि यहाँ वर्जन अर्थ में है। इसलिए 'अपपरी वर्जने' से कर्मप्रवचनीय संज्ञा; तथा प्रकृत सूत्र से हरि शब्द से पंचमी विभक्ति हुयी है। लक्षणादि अर्थ में यदि 'परि' होगा तो 'लक्षणेत्थम्भूता...' इस सूत्र से उसकी कर्मप्रचनीयसंज्ञा होगी। तथा 'कर्मप्रवचनीयुक्ते...' इत्यादि सूत्र से द्वितीय विभक्ति होगी। इसलिए वहाँ हरिं परि यह उदाहरण होगा।

मर्यादा अर्थ में आङ्– आ मुक्तेः संसार– यहाँ 'आङ्मर्यादा...' इस सूत्र से आङ् की कर्मप्रवचनीय संज्ञा होती है; तथा इस सूत्र से आङ् के योग में मुक्ति से पंचमी विभक्ति होती है।

अभिविधि अर्थ में आङ्– आ सकलाद् ब्रह्म। पूर्ववत् जानना चाहिए।

सूत्र – प्रतिः प्रतिनिधिप्रतिदानयोः 1/4/92

वृत्ति– एतयोरर्थयोः प्रतिरूक्तसंज्ञःस्यात्।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – इस सूत्र के द्वारा प्रति की कर्मप्रवचनीय संज्ञा की जाती है। यह संज्ञासूत्र है। सदृशः प्रतिनिधिः। जो सदृश=समान है वह प्रतिनिधि कहलाता है। दत्तस्य प्रतिनिर्यातनम् प्रतिदानम्। जो दिया गया है उसके स्थान पर वापस करना प्रतिदान कहलाता है। इन दोनों अर्थों में प्रति की कर्मप्रवचनीय संज्ञा होती है। यह सूत्र का अर्थ है।

उदाहरण– प्रतिनिधि– प्रद्युम्नः कृष्णात् प्रति। प्रद्युम्न कृष्ण के सदृश है। यहाँ पर प्रतिनिधि अर्थ में प्रति है। इसलिए इस सूत्र से इसकी कर्मप्रवचनीय संज्ञा होती है; तथा इसके योग में 'प्रतिनिधिप्रतिदाने च यस्मात्' इस अग्रिम सूत्र से कृष्ण से पंचमी विभक्ति होती है।

प्रतिदान– तिलेभ्यः प्रतियच्छति माषान्। ऋण के रूप में लिये गये तिल के स्थान में माष (उड़द) को लौटाता है। यहाँ प्रति प्रतिदान अर्थ में है। इसलिए इसकी प्रकृत सूत्र से कर्मप्रवचनीय संज्ञा होती है; तथा इसके योग में अग्रिम सूत्र से तिल से पंचमी विभक्ति होती है।

सूत्र – प्रतिनिधिप्रतिदाने च यस्मात् 2/3/11

वृत्ति– अत्र कर्मप्रवचनीयैर्योगे पंचमी स्यात्। प्रद्युम्नः कृष्णात् प्रति। तिलेभ्यः प्रतियच्छति माषान्।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – इस सूत्र के द्वारा पंचमी विभक्ति की जाती है। पंचम्यपाङ्परिभिः 2/3/10 इस पूर्व सूत्र से 'पंचमी'; इस पद की अनुवृत्तिहोती है। 'यस्मात्' यह षष्ठ्यर्थ में पंचमी है। इसका 'यस्य' यह अर्थ समझना चाहिये। इस प्रकार जिसका प्रतिनिधि अथवा प्रतिदान हो उससे पंचमी विभक्ति होती है, कर्मप्रवचनीय का योग होने पर यह सूत्रार्थ होता है।

उदाहरण – प्रतिनिधि– प्रद्युम्नः कृष्णात् प्रति। युद्धादि में प्रद्युम्न कृष्ण के सदृश हैं। पूर्ववत् जानना चाहिए।

प्रतिदान– तिलेभ्यः प्रतियच्छति माषान्। इसको भी पूर्ववत् जानना चाहिये।

सूत्र – अकर्तयृणे पंचमी 2/3/24

वृत्ति– कर्तृवर्जितं यदृणं हेतुभूतं ततः पंचमी स्यात्। शताद्बद्धः। अकर्तरि किम्–शतेनबन्धितः।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – इस सूत्र के द्वारा पंचमी विभक्ति का विधान किया जाना है। 'हेतौ' इस सूत्र की अनुवृत्तिहोती है। 'अकर्तरि' ऋणे, पंचमी यह पदच्छेद है। इस प्रकार कर्तृसंज्ञा रहित हेतु रूप जो ऋण है उससे पंचमी विभक्ति होती है। यह सूत्र हेतुतृतीया का अपवाद है।

उदाहरण – शताद्बद्ध। ऋणदाता (उत्तमर्ण) के द्वारा ऋणग्रहीता (अधमर्ण) सुवर्णशत् के कारण बाँधा गया। निश्चित समय में ऋण नहीं लौटाने के कारण बाँधा गया यह अर्थ है। यहाँ प्रकृत सूत्र से शतशब्द् से पंचमी विभक्ति होती है।

अब यहाँ यह शंका होती है कि इस सूत्र में अकर्तरि (कर्तृसंज्ञा रहित) इस पद की क्या आवश्यकता है। तो इसका उत्तर देते हुए दीक्षित जी ने मूल में लिखा कि शतेन बन्धितः। यहाँ 'शत' कर्तृसंज्ञक है। इसलिए इससे पंचमी विभक्ति न हो जाय इस हेतु से यहाँ अकर्तरि पद रखा गया है। 'बन्धितः' इस पद में 'हेतुमति च' इस सूत्र से विच् प्रत्यय हुआ है। हेतुमत्ण्यन्त 'बन्धि' धातु से कर्म में क्तप्रत्यय करने पर 'बन्धितः' यह कृदन्त शब्द बनता है। यहाँ पर उत्तमर्ण प्रयोज्यकर्ता है तथा 'शत' प्रयोजक कर्ता है। इसलिए शत की 'तत्प्रयोजको

हेतुश्च' इस सूत्र से हेतुसंज्ञा एवम् कर्त् संज्ञा होती है। यदि इस सूत्र में 'अकर्तरि' यह पद नहीं होता तो शतशब्द से कर्तृतृतीया को (कर्तृकरणयोस्तृतीया) बाँधकर पंचमी विभक्ति हो जाती, वह न हो इसलिए इस सूत्र में अकर्तरि पद रखा गया है।

सूत्र – विभाषा गुणेऽस्त्रियाम् 2/3/25

वृत्ति – गुणे हेतावस्त्रीलिङ्गे पंचमी वा स्यात्। जाड्याद् जाड्येन वा बद्धः। गुणे किम्? धनेन कुलम्। अस्त्रियां किम्– बुद्ध्य मुक्तः। 'विभाषा' इति योगविभागाद् अगुणे स्त्रियां च क्वचित्। धूमादग्निमान्। नास्ति घटोऽनुपलब्धेः।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – पंचमीविभक्ति का विधान करने वाला यह विधिसूत्र है। 'हेतौ' इस सूत्र की अनुवृत्तिहोती है। 'हेतौ' इस सूत्र का अपवाद है। विभाषा, गुणे, अस्त्रियाम् यह पदच्छेद है। न स्त्रियाम् 'अस्त्रियाम्', यहाँ नञ्तत्पुरूषसमास है। इस प्रकार स्त्रीलिङ्ग भिन्न गुणवाचक हेतुवाचक शब्द से पंचमी विभक्ति होती है, विकल्प से यह सूत्रार्थ होता है।

उदाहरण – जाड्याद् जाड्येन वा बद्धः। जड़ता के कारण बंधा है। इस उदाहरण में जाड्य गुण एवम् हेतु है; तथा स्त्रीलिग्ङ भिन्न है। इसलिए इस सूत्र से विकल्प पंचमी विभक्ति होती है। जब पंचमी विभक्ति नहीं होती तब 'हेतौ' सूत्र से तृतीया विभक्ति होती है। इस प्रकार जाड्याद्, जाड्येन इस रूप की सिद्धि होती है।

अब यहाँ शंका होती है कि इस सूत्र में 'गुणे' इस पद की क्या आवश्यकता है। इसका उत्तर यह है कि 'धनेन कुलम्' यहाँ धनशब्द से विकल्प से पंचमी विभक्ति न हो जाय, इसलिए यहाँ 'गुणे' यह पद रखा गया है। धनशब्द द्रव्यवाची है। गुणवाची नहीं है।

अब दूसरी शंका यह होती है कि इस सूत्र में 'अस्त्रियाम्' इस पद की क्या आवश्यकता है? तो इसका उत्तर यह है कि 'बुद्ध्या मुक्तः' यहाँ पर 'बुद्धि' स्त्रीलिङ्ग शब्द से विकल्प से पंचमी विभक्ति न हो जाय इसलिए यहाँ 'अस्त्रियाम्' यह पद रखा है। बुद्धि शब्द क्तिन्प्रत्ययान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द है। हेतौ सूत्र से नित्य तृतीया विभक्ति होती है।

इस एक सूत्र को योग विभाग के द्वारा दो सूत्र में बांट लिया जाता है। (1) विभाषा (2) गुणेऽस्त्रियाम्। द्वितीय सूत्र में विभाषा की अनुवृत्तिकरके पूर्ववत् अर्थ होता है। पूर्ववत उदाहरण भी जानना चाहिए।

परन्तु 'विभाषा' इस प्रथम सूत्र में 'हेतौ' 'पंचमी' इन दोनों पदों की अनुवृत्तिहोती है। इस प्रकार 'विभाषा' इस सूत्र का हेतु अर्थ में पंचमी विभक्ति विकल्प से होती है। यह अर्थ होता है। 'योगविभाग इष्टसिध्यर्थः' योग विभाग इष्ट प्रयोग की सिद्धि के लिए होता है। इस नियम से अगुण वाचकशब्द से तथा स्त्रीलिङ्ग में भी कहीं कहीं विकल्प से पंचमी विभक्ति होती है।

उदाहरण – जैसे

(1) धूमाद् धूमेन वा अग्निमान्। इस उदाहरण में धूम द्रव्यवाचक है, गुणवाचक नहीं है। परन्तु फिर भी धूम शब्द से विकल्प से पंचमी विभक्ति होती है।

(2) नास्ति घटोऽनुपलब्धेः। अनुपलब्धिशब्द यद्यपि स्त्रीलिङ्ग शब्द है फिर भी 'विभाषा' योग विभाग के कारण अनुपलब्धि शब्द से पंचमी विभक्ति होती है।

सूत्र – पृथग्विनानानाभिस्तृतीयाऽन्यतरस्याम् 2/3/32

वृत्ति– एभिर्योगे तृतीया स्यात् पंचमीद्वितीये च। अन्यतरस्यांग्रहणं समुच्चयार्थम्, पंचमीद्वितीये चानुवतते। पृथग् रामेण, रामाद् रामं वा। एवं बिना नाना।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – इस सूत्र के द्वारा विकल्प से तृतीया पंचमी तथा द्वितीया विभक्ति का विधान किया जाता है। 'अपादाने पंचमी' इस सूत्र से 'पंचमी' इस पद की तथा 'एनपा द्वितीया' इस सूत्र से 'द्वितीया' इस पद की अनुवृत्तिहोती है। 'अन्यतरस्याम्' का अर्थ समुच्चय है। इस पद के कारण ही तीनों विभक्ति का समावेश होता है। इस प्रकार पृथक, नाना, बिना के योग में तृतीया, पंचमी, द्वितीया, विभक्ति होती है। यह सूत्रार्थ होता है।

उदाहरण – पृथग् रामेण, रामाद्, रामं वा। राम से भिन्नवाला। यहाँ पृथग् के योग में रामशब्द से प्रकृत सूत्र द्वारा तृतीया, पंचमी द्वितीया विभक्ति होकर उक्त रूप की सिद्धि होती है। इसी प्रकार रामेण रामाद् रामं विना, नाना इस उदाहरण को भी जानना चाहिए।

सूत्र – करणे च स्तोकाल्पकृच्छ्रकतिपयस्यासत्ववचनस्य 2/3/33

वृत्ति– एभ्योऽद्रव्यवचनेभ्यः करणे तृतीयापंचम्यौ स्तः। स्तोकेन स्तोकाद्वा मुक्तः। द्रव्ये तु स्तोकेन विषेण हतः।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – यह तृतीया, पंचमी विभक्ति का विधान करने वाला विधिसूत्र है। सत्व का अर्थ है द्रव्य। असत्व का अर्थ है अद्रव्य। 'पृथग्विनानाना...' इस सूत्र से 'अन्यतरस्याम्' पद की तथा अपादाने पंचमी 'से पंचमी' इस पद की अनुवृत्तिहोती है। इस प्रकार करण में पंचमी विकल्प से होती है। पंचमी विभक्ति के अभाव में 'कर्तृकरणयोस्तृतीया' इस सूत्र से करण में तृतीया सिद्ध ही है।

स्तोक=थोड़ा। अल्प=थोड़ा। (कम) कृच्छ्र=कष्ट। कतिपय=कुछ। इस प्रकार स्तोक, अल्प, कृच्छ्र कतिपय इन चारों असत्ववाचक शब्दों से करण में तृतीया पंचमी विभक्ति होती है। यह सूत्र का अर्थ होता है।

उदाहरण – स्तोकेन स्तोकाद्वा मुक्तः। अल्प प्रयास से मुक्त हुआ। यहाँ स्तोक शब्द अद्रव्यवाचक है; तथा करण है। इसलिए इस सूत्र से पंचमी तृतीया विभक्ति होकर उक्त रूप की सिद्धि होती है। यहाँ यह समझना चाहिये कि यह सूत्र विकल्प से पंचमी विभक्ति करता है। तृतीया 'कर्तृकरणयोस्तृतीया' इस सूत्र से ही होती है।

इसी प्रकार अल्पेन, अल्पेन, अल्पाद्वा मुक्तः। कृच्छ्रेन कृच्छ्राद्वा मुक्तः। कतिपयेन कतिपयाद्वा मुक्तः; इत्यादि उदाहरणों को भी जानना चाहिए।

अब यहाँ यह शंका होती है कि 'असत्ववचन' इस पद की इस सूत्र में क्या आवश्यकता है; तो इसका उत्तर यह जानना चाहिए कि सत्व=द्रव्य अर्थ होने पर पंचमी विभक्ति न हो जाय

इसलिए इस सूत्र में 'असत्ववचन' यह पद रखा गया है। इसी बात को बताने के लिए दीक्षित जी लिखते है कि 'द्रव्ये तु स्तोकेन विषेण हतः'। यहाँ स्तोकशब्द द्रव्यवाचक है इसलिए यहाँ केवल तृतीया विभक्ति ही होती है; न कि पंचमी।

सूत्र – दूरान्तिकार्थेभ्यो द्वितीया च 2/3/35

वृत्ति– एभ्यो द्वितीयास्यात्, चात् पंचमीतृतीये च। प्रातिपदिकार्थमात्रे विधिरयम्। ग्रामस्य दूरं, दूरात् दूरेण वा, अन्तिकम्, अन्तिकाद्, अन्तिकेन वा। असत्ववचनस्य इत्यनुवृत्तेर्नेह दूरः पन्थाः।

सूत्रानुवाद एवं व्याख्या – इस सूत्र के द्वारा द्वितीया, पंचमी, तृतीया विभक्ति का विधान किया जाता है। यह विधिसूत्र है। दूरान्तिकार्थेभ्यः, द्वितीया, च, यह तीन पद इस सूत्र में है। 'च' से व्यवहित पंचमी, तृतीया का समुच्चय किया जाता है। इस सूत्र के द्वारा प्रातिपदिकार्थमात्र में प्रथमा को बाधकर द्वितीया, पंचमी, तृतीया विभक्ति का विधान किया जाता है। इस बात को बतलाने के लिए दीक्षित जी ने लिखा 'प्रातिपदिकार्थमात्रे विधिरयम्' इति। इस प्रकार दूरार्थक एवम् अन्तिकार्थक शब्द से द्वितीया, पंचमी एवम् तृतीया विभक्ति होती है। यह सूत्रार्थ होता है।

उदाहरण – ग्रामस्य दूरं, दूराद् दूरेण वा। ग्रामस्य अन्तिकम् अन्तिकाद्, अन्तिकेन वा। ग्राम से दूर, एवम् पास यह उक्त उदाहरण का अर्थ है। यहाँ दूर एवम् अन्तिक शब्द से क्रमशः द्वितीया, पंचमी और तृतीया विभक्ति का विधान प्रकृत सूत्र से किया गया है।

इस सूत्र में 'करणे च स्तोकाल्प...' (2/3/33) इस पूर्व सूत्र से 'असत्ववचनस्य' इस पद की अनुवृत्तिहोती है। जिसके कारण 'दूरः पन्थाः' इस उदाहरण में दूर शब्द से द्वितीया आदि विभक्तियाँ नहीं हुयी है। किन्तु प्रातिपदिकार्थ मात्र में प्रथमा विभक्ति हुयी है। यहाँ दूर शब्द सत्व=द्रव्य वाचक है।

9.3 सारांश

इस इकाई में कारक प्रकरण के अंतर्गत पंचमी विभक्ति के विधायक सूत्रों, वर्तिकों के अर्थ और व्याख्या संबंधी अध्ययन आपने किया। अपादान की स्पष्ट लक्षण प्रतीति को आपने उदाहरणों द्वारा स्पष्ट भी किया। कुछ अपवाद नियम भी आपने जानें कि क्यों विशेष अवस्था में पंचमी विभक्ति का विधान होता है। सूत्रानुवाद और व्याख्या द्वारा विशषे योग स्थितियों को भी आपने जाना (अरात्, ऋते, आहि इत्यादि)। आशा है इकाई के अध्ययनोपरांत आप यह समझ गए होंगे कि पंचमी विभक्ति का सामान्य विधान कहाँ–कहाँ होता है; और कहाँ–कहाँ यह अपवाद स्वरूप होता है, और कहाँ–कहाँ नहीं होता है।

9.4 शब्दावली

ध्रुव	=	अवधिभूत
अपाय	=	विश्लेष
कारक	=	क्रियाजनक
जुगुप्सा	=	घृणा
प्रमाद	=	अनवधान (ध्यान न देना)
असोढ	=	असह्य
वारण	=	प्रवृत्तिका विघात
अन्तर्धि	=	व्यवधान
उपयोग	=	नियम पूर्वक विद्या का ग्रहण करना।
जनि	=	जायमान
प्रभव	=	प्रथम प्रकाश स्थान
ऋते	=	विना
वर्जन	=	छोड़कर
जाड्य	=	मूर्खता (जड़ का भाव)

9.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. लघुसिद्धान्तकौमुदी
2. वैयाकरण सिद्धान्त कौमुदी (प्रथम भाग)
   (बालमनोरमा तत्त्वबोधिनी टीका सहित)
3. प्रौढमनोरमा (कारकप्रकरण)

9.6 बोध एवं अभ्यास प्रश्न

1. 'आख्यातोपयोगे' सूत्र की व्याख्या कीजिए।
2. 'प्रद्युम्नः कृष्णात् प्रति' उदाहरण को विभक्ति निर्देशपूर्वक समझाइए।
3. 'विभाषा गुणेऽस्त्रियाम्' सूत्र की व्याख्या कीजिए।
4. 'यवेभ्यो गां वारयति' उदाहरण को विभक्ति निर्देशपूर्वक समझाइए।